महाकवि धनपाल : व्यक्तित्व और कृतित्व

□ **श्री मानमल कुदाल**, उदयपुर विश्वविद्यालय, उदयपुर

अपभ्रंश साहित्य के कवियों में धनपाल का प्रमुख स्थान है। यद्यपि कवि धनपाल के सम्बन्ध में विशेष जानकरी अभी तक नहीं मिल सकी है, पर स्वयं धनपाल ने जो परिचय अपनी कृति भविसयतकहा में दिया है वह संक्षिप्त होने पर भी महत्त्वपूर्ण है। कवि ने धक्कड़ नामक वैश्य वंश में जन्म लिया था। इनके पिता का नाम माएसर (मातेसर) और माता का नाम धनश्री था।

धक्कडवणिवंसि माएसरहु समुब्भविण।
धणसिरदेविं सुएण विरइउ सरसहु संभविण॥ —भ० क० २२,१

कहा जाता है कि उन्हें सरस्वती का वरदान प्राप्त था—

चिन्तिय धणवाले वणिवरेण सरसइ बहुलद्ध महावरेण। —भ० क० १, ४

कवि निश्चित ही प्रतिभाशाली विद्वान् रहे होंगे और उन्होंने अन्य रचनाएँ भी लिखी होंगी। किन्तु आज उनको खोज निकालना असम्भव-सा प्रतीत होता है। क्योंकि धनपाल नाम के कई विद्वानों के उल्लेख मिलते हैं। पं० परमानन्द शास्त्री ने धनपाल नाम के चार विद्वानों का परिचय दिया है।[1] ये चारों ही भिन्न-भिन्न काल के विभिन्न विद्वान् हैं। उनमें से दो संस्कृत भाषा के विद्वान् तथा ग्रन्थ रचयिता थे और दो अपभ्रंश के। संस्कृत के प्रथम धनपाल राजा भोज के आश्रित थे, जिन्होंने तिलकमंजरी और पाइयलच्छी ग्रन्थ की रचना १०वीं शती में की थी। दूसरे धनपाल १३वीं शती के हैं। उनके द्वारा लिखित तिलकमंजरी नामक ग्रन्थ का ही अब तक पता लग पाया है। तीसरे धनपाल अपभ्रंश भाषा में लिखित बाहुबलिचरित के रचयिता हैं, जिनका समय १५वीं शती है। ये गुजरात के पुरवाड वंश के तिलक थे। इनकी माता का नाम सुहडा देवी और पिता का नाम सेठ सुहडपुत्र था। जैसा कि कहा गया है—

गुज्जरपुरवाडवं सतिलड़ सिर सुहडसेट्ठि गुणसणणिलउ।
तहो मणहर छायागेहणिय सुहडाएवी णामे भणिय॥
तहो उवरिजाउ वदु विणयजुओ धणवालु वि सुउ णामेण हुओ।
तहो विण्णि तणुब्भव विउलगुण संतोसु तह्ँय हरिराउ पुण॥

—बाहुबलिचरित, अन्त्य प्रशस्ति, अनेकान्त से उद्धृत

चौथे धनपाल भविसयतकहा कथा काव्य के लेखक धक्कड़ वंश में उत्पन्न हुए थे। धर्मपरीक्षा के कर्त्ता कवि हरिषेण भी इसी वंश के थे। धर्मपरीक्षा का रचना काल वि० सं० १०४४ है। महाकवि वीर कृत जम्बूस्वामी चरित में भी मालव देश में धक्कड़ वंश के तिलक महासूदन के पुत्र तक्खडु श्रेष्ठी का उल्लेख मिलता है।[2] देलवाड़ा

---

१. पं० परमानन्द जैन शास्त्री : धनपाल नाम के चार विद्वान् कवि, अनेकान्त, किरण ७-८, पृ० ८२.

२. पं० परमानन्द जैन शास्त्री—अपभ्रंश भाषा का जम्बूस्वामिचरिउ और वीर, अनेकान्त, वर्ष १३, किरण ६ पृ० १५५.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के वि० सं० १२८७ तेजपाल वाले शिलालेख में भी धर्कट जाति का उल्लेख है। इससे पता लगता है कि १०वीं से १३वीं शती तक यह वंश अत्यन्त प्रसिद्ध रहा है। अतएव भविसयतकहा के लेखक धनपाल का होना इसी समय सम्भावित है।

काल-निर्णय—कवि धनपाल के समय के बारे में विभिन्न विद्वानों के अलग-अलग विचार हैं—

(१) भाषा के आधार पर डॉ० हर्मन जेकोबी इन्हें १०वीं शती का मानते हैं। क्योंकि इनकी भाषा हरिभद्र सूरि के नेमिनाहचरिउ से मिलती है। मुनि जिनविजय ने हरिभद्र का समय ७०५ से ७७५ के बीच माना है।[1]

(२) श्री दलाल और गुणे के अनुसार भविसयतकहा की भाषा आचार्य हेमचन्द्र के व्याकरण में प्रयुक्त भाषा की अपेक्षा अधिक प्राचीन है। धनपाल के समय में अपभ्रंश बोली जाती रही होगी, जबकि हेमचन्द्र के समय में वह मृतभाषा हो गयी थी।[2] अतः दोनों में बीच २५० वर्ष का अन्तर होना चाहिए।

(३) डॉ० देवेन्द्रकुमार शास्त्री की 'भविसयतकहा तथा अपभ्रंश काव्य' पृ० ६४ के अनुसार भ० कहा की उपलब्ध प्रतियों में सबसे प्राचीन संवत् १४८० की प्रति मिलती है, जो डॉ० शास्त्री को आगरा भण्डार से प्राप्त हुई है (वही पृ० १५५)। इसी काव्य की प्रशस्ति में इसको वि० सं० १३९३ में लिखा हुआ कहा गया है। उल्लिखित पंक्ति इस प्रकार हैं—

सुसंवच्छरे अक्किरा विक्कमेणं अहिएहिं तेणवदिते रहसएणं।
वरिस्सेय पूसेण सेयम्मि पक्खे तिही वारिसी सोमिरोहिणिहिरिक्खे॥
सुहज्जोइमयरंगओवुद्धुपत्तो इओ सुन्दरो केत्थु सुहदिणि समत्तो।

(४) ऐतिहासिक दृष्टि से इस ग्रन्थ में जो तथ्य प्राप्त होते हैं, उनसे यह काल उचित जान पड़ता है। धनपाल ने दिल्ली के सिंहासन पर मुहम्मद शाह (१३२५-५१ ई०) का शासन करना लिखा है। सन् १३२८ ई० में आचार्य जिनचन्द्रसूरि का मुहम्मदशाह को धर्म श्रवण कराना एक महत्त्वपूर्ण घटना मानी जाती है। सम्भवतः इसीलिए मुसलमान उसे काफिर कहते हैं।[3]

इस प्रकार ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर कवि धनपाल का १४वीं शती में भविसयतकहा की रचना करना सुनिश्चित प्रतीत होता है।[4]

धनपाल का सम्प्रदाय—धनपाल जैन धर्म के दिगम्बर सम्प्रदाय के अनुयायी थे। अतएव यह स्वाभाविक था कि कवि अपनी रचना में अपनी मान्यता के अनुसार वर्णन करता। भविसयतकहा के 'जेण भंजिवि दियम्बरि लायउ' के अतिरिक्त कतिपय वर्णनों तथा सैद्धान्तिक विवेचन के अनुसार भी उनका दिगम्बरमतानुयायी होना निर्विवाद सिद्ध होता है। कवि ने अष्टमूलगुणों का वर्णन करते हुए कहा है कि मधु, मद्य, मांस और पाँच उदुम्बर फलों को किसी भी जन्म में नहीं खाना चाहिए। जैसा कि कहा है—

महु मज्जु मंसु पंचुंबराइं खज्जंति ण जम्मंतर सयाइ (१६,८)

कवि का यह कथन भावसंग्रह के कर्ता देवसेन के अनुसार है—

महुमज्जमंसविरई चाओ पुण उंबराण पंचण्हं।
अट्ठेदे मूलगुणा हवंति फुडु देसविरयम्मि। —(भावसंग्रह, गाथा ३५६)

---

१. जै० सा० सं० १
२. संपादक सी० डी० दलाल और पी० डी० गुणे : धनपाल की भविसयतकहा, १९२३, परिचय पृ० ४.
३. वही, पृ० ८६.
४. भ० क० तथा अपभ्रंश कथा काव्य—देवेन्द्रकुमार शास्त्री, पृ० ८७.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह भी ध्यान में देने योग्य बात है कि कवि ने अपभ्रंश के कवि विबुध श्रीधर से भी बहुत कुछ ग्रहण किया था। क्योंकि आ० जिनसेन तथा समन्तभद्र ने अष्टमूलगुणों में तीन मकारों और पाँच अणुव्रतों को गिनाया है। परन्तु विबुध श्रीधर ने मद्य, मांस, मधु और पाँच उदुम्बर फलों के त्याग को आठ मूलगुण कहा है—

मज्जुमंसु महुणउ भाक्खेज्जइ पंचुंबरफल णियरुमुइज्जइ।
अट्ठमूलगुणु ए पालिज्जहिं सहुं संधाण एहिं ण गसिज्जहिं॥ —(भविसयम्बलि, ५, ३)

रचनाएँ—धनपाल की एकमात्र अपभ्रंश रचना भविसयतकहा प्राप्त होती है। यह कथा २२ संधियों में विभाजित है। इसके तीन खण्ड हैं। प्रथम में भवियत के वैभव का वर्णन है। द्वितीय खण्ड में कुरुराज और तक्षशिला-राज के युद्ध में भविष्यदत्त की प्रमुख भूमिका एवं विजय का वर्णन है। तृतीय खण्ड में भविष्यदत्त के तथा उनके साथियों के पूर्वजन्म और भविष्य जन्म का वर्णन है।

कथावस्तु—चरितनायक भविष्यदत्त एक वणिक् पुत्र है। वह अपने सौतेले भाई बन्धुदत्त के साथ व्यापार हेतु परदेश जाता है, धन कमाता है और विवाह भी कर लेता है। किन्तु उसका सौतेला भाई उसे बार-बार धोखा देकर दुःख पहुँचाता है। यहाँ तक कि उसे एक द्वीप में अकेला छोड़कर उसकी पत्नी के साथ घर लौट आता है और उससे विवाह करना चाहता है। किन्तु इसी बीच भविष्यदत्त भी एक यक्ष की सहायता से घर लौट आता है; अपना अधिकार प्राप्त करता है और राजा को प्रसन्न कर राजकन्या से विवाह करता है। अन्त में मुनि के द्वारा धर्मोपदेश व अपने पूर्व-भव का वृत्तान्त सुनकर विरक्त हो, पुत्र को राज्य दे, मुनि हो जाता है।

यह कथानक श्रुतपंचमी व्रत का माहात्म्य प्रकट करने के लिए लिखा गया है। ग्रन्थ के अनेक प्रकरण बड़े सुन्दर और रोचक हैं। बालक्रीड़ा, समुद्र-यात्रा, नौका-भंग, उजाड़नगर, विमान-यात्रा आदि वर्णन पढ़ने योग्य हैं। कवि के समय विमान हो अथवा न हो किन्तु उसने विमान का वर्णन बहुत सजीव रूप में किया है।

वस्तु-वर्णन—कवि धनपाल ने अपने काव्य भविसयतकहा में वस्तु-वर्णन कई रूपों में किया है। कवि ने जहाँ परम्परामुक्त वस्तु-परिगणन, इतिवृत्तात्मक शैली को अपनाया है, वही लोक प्रचलित शैली में भी जन-जीवन का स्वाभाविक चित्रण कर लोकप्रवृत्ति का परिचय दिया है। वस्तु-वर्णन में नगर-वर्णन, कंचनद्वीप यात्रा वर्णन, समुद्र-वर्णन, विवाह-वर्णन, युद्ध-यात्रा-वर्णन, युद्ध-वर्णन, तैल चढ़ाने का वर्णन, बसन्त-वर्णन, बाल वर्णन, राजद्वार वर्णन, शकुन-वर्णन, वन-वर्णन, रूप-वर्णन, मेगानद्वीप का वर्णन और प्रकृति-वर्णन आदि का सजीव वर्णन किया है, जिसमें रसात्मकता देखी जा सकती है। घटना-वर्णनों के बीच अनेक मार्मिक स्थलों की नियोजना स्वाभाविक रूप से हुई है, जिनमें कवि की प्रतिभा अत्यन्त स्फुट है। वर्णन के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

विवाह-वर्णन

किय मंडवसोह धरि धरि, बद्धइ तोरणइं।
उल्लोच सयाइं रइयइ, जणमण चोरणइं॥ —(भ० क० १, ८)

रूप-वर्णन

सा कमलसिरी णाउं तहु पत्ती अखलिय जिणवरसासणिभत्ती।
समचक्कल कडियल सुमणोहर वियडरमणघणपीणपओहर।
छणससि बिंब समुज्जलवयणी णवकुवलयवलदीहरणायणी। —(भ० क० १, १२)

भाव-व्यंजना—प्रबन्ध में परिस्थितियों और घटनाओं के अनुकूल मार्मिक स्थलों की संयोजना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानी जाती है, क्योंकि कवि की प्रतिभा और भावुकता का सच्चा परिचय उन्हीं स्थलों पर मिलता है, जिनमें मनुष्य हृदय की वृत्तियाँ सहज रूप में, प्रसंग को हृदयंगम करते ही भावनाओं में तन्मय हो जाती हैं। धनपाल की रचना में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निम्नलिखित स्थल अत्यन्त मर्मस्पर्शी कहे जा सकते हैं—बन्धुदत्त का भविष्यदत्त को अकेला मेगानद्वीप में छोड़ देना और साथ के लोगों का सन्तप्त होना, माता कमलश्री को भविष्यदत्त के न लौटने का समाचार मिलना, बन्धुदत्त का का लौटकर आगमन, कमलश्री का विलाप और भविष्यदत्त का मिलन आदि।

कमलश्री विलाप करती है कि हा हा पुत्र ! मैं तुम्हारे दर्शन के लिए कब से उत्कण्ठित हूँ। चिरकाल से आशा लगाये बैठी हूँ। कौन आँखों से यह सब देखकर अब समाश्वस्त रह सकता है ? हे धरती ! मुझे स्थान दे, मैं तेरे भीतर समा जाऊँ। पूर्वजन्म में मैंने ऐसा कौन-सा कार्य किया था, जिससे पुत्र के दर्शन नहीं हो रहे हैं। इस प्रकार के वचनों के साथ विलाप करते हुए उसे एक मुहूर्त बीत गया।

हा हा पुत पुत उक्कंठियइं घोरंतरिकालिपरिट्ठियइं।
को पिक्खिवि मणु उब्भुद्धरमि महि विवरू देहिजिं पइसरमि।
हा पुव्वजम्मि किउ काइं मइं णिहि देसणि णं णयणइं हयइं। —(भ० क० ८, १२)

इसके अलावा इसमें रस-व्यंजना की दृष्टि से शृंगार, वीर और शान्त-रस का परिपाक हुआ है।

संवाद-योजना—कवि धनपाल के कथाकाव्य में संवादपूर्ण कई स्थल दृष्टिगोचर होते हैं, जिनमें काव्य का चमत्कार बढ़ गया है और कथानक में स्वाभाविक रूप से गतिशीलता आ गयी है। मुख्य रूप से निम्न संवाद भविसयतकहा में द्रष्टव्य हैं— प्रवास करते समय पुत्र भविष्यदत्त और माता कमलश्री का वार्तालाप, भविष्यदत्त-भविष्यानुरूपा का संवाद, राक्षस-भविष्यदत्त संवाद, भविष्यदत्त-बंधुदत्त संवाद, कमलश्री मुनि-संवाद, बन्धुदत्त-सरूपा संवाद और मनोवेग विद्याधर-भविष्यदत्त तथा मुनिवर संवाद आदि।

शैली—धनपाल के कथाकाव्य में अपभ्रंश के प्रबन्ध काव्यों की कडवकबन्ध शैली प्रयुक्त है। कडवक बन्ध सामान्यतः १० से १६ पंक्तियों का है। कडवक, पज्झरिका, अडिल्ला या वस्तु से समन्वित होते हैं। सन्धि के प्रारम्भ में तथा कडवक के अन्त में ध्रुवा, ध्रुवक या धत्ता छन्द प्रयुक्त है। धत्ता नाम का एक छन्द भी है किन्तु सामान्यतः किसी भी छन्द को धत्ता कहा जा सकता है।

भाषा—धनपाल की भाषा साहित्यिक अपभ्रंश है पर उसमें लोकभाषा का पूरा पुट है। इसलिए जहाँ एक ओर साहित्यिक वर्णन तथा शिष्ट प्रयोग है वहीं लोक-जीवन की सामान्य बातों का विवरण घरेलू वातावरण में वर्णित है। उदाहरण के लिए—सजातीय लोगों का जेवनार में षट् रसों वाले विभिन्न व्यंजनों के नामों का उल्लेख है, जिनमें घेवर, लड्डू, खाजा, कसार, मांडा, भात, कचरिया, पापड़ आदि मुख्य हैं।

गुणाधारिया लड्डुवा खीरखज्जा कसारं सुसारं सुहाली मणोज्जा।
पुणो कच्चरा पप्पडा डिण्ण भेया जयंताण को वण्णए दिव्व तेया॥ —(भ० क० १२, ३)

डॉ० हर्मन जेकोबी के अनुसार धनपाल की भाषा बोली है, जो उत्तर-प्रदेश की है। डॉ० नगारे ने पश्चिमी अपभ्रंश की जिन विशेषताओं का निर्देश किया है वे भविसयतकहा में भली भाँति दृष्टिगोचर होती हैं।[1]

अलंकार-योजना—धनपाल ने इस कथा काव्य में सोद्देश्यमूलक अलंकारों में उपमा और उत्प्रेक्षा का प्रयोग किया है। उपमा में कई रूप दृष्टिगोचर होते हैं। मूर्त और अमूर्त भाव में साम्य है। जैसे—

ते विदिट्ठु कुमारू अकायरू कडवाणालिण णाइं रयणारू —(भ० क० ५, १८)

इसी प्रकार प्रकृति-वर्णन में मानवीय रूपों तथा भावों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। कवि की उर्वर एवं अनुभूतिमयी कल्पना का परिचय उसकी अलंकार योजना में मिलता है।

---

१. डॉ० गजानन वासुदेव नगारे : हिस्टारिकल ग्रामर आव् अपभ्रंश, पूना, १९४८, पृ० २९०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्य अलंकारों के उदाहरण इस प्रकार है—

१. **कलि-तरुवरहो मूलु छिंदिज्जइ** (रूपक)
(कलह रूपी वृक्ष की जड़ भी नष्ट कर देनी चाहिए।)

२. **किउ अपमाण्ड णिउत्तु मुहल्लउ अहरउ णावइ दाडिमहुल्लउ** (व्यतिरेक)
(मुख से संलग्न अधर (निचले ओठ) ने अनार के फूल को नीचा दिखाकर उसका अपमान किया।)

३. **जो भक्खइ मंसु तासु कहिमि किं होइ दय** (काव्यलिंग)
(जो मांस खाता है उसके दया कहाँ से हो सकती है?)

छन्द—अपभ्रंश के काव्यों में मुख्यतः मात्रिक छन्दों का प्रयोग हुआ है। मात्रिक रचना परवर्ती प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य की निजी विशेषता है। कवि धनपाल ने अपने काव्य में निम्नलिखित छन्द विशेष रूप से प्रयुक्त किये हैं[1]—

पञ्झरिका, अडिल्ला, दुवई, मरहट्ठा, सिंहावलोकन, काव्य, प्लवंगम, कलहंस, गाथा, धत्ता, उल्लाला, अभिसारिका, विभ्रमविलासवदन, किन्नरमिथुनविलास, मर्कटिका, चामर, भुजंगप्रयात, शंखनारी, लक्ष्मीधर और मन्दार।

कुछ छन्दों के उदाहरण द्रष्टव्य है—

पञ्झरिका

किं करमि खीणविहवप्पहाइ णउ लहमि सोह सज्जण सहाइ।
अह णिद्धणु सोहइ ण कोइ धणु संपय विणु णुण्णहि ण णेह॥ —(भ० क० १, २)

शंखनारी

रणे णीसंरते भयं वीसरंते।
महावाणि वग्गे पुरे हट्ट मग्गे॥ —(भ० क० १४, ८)

काव्य

पियविरहाणलेण संतत्तउ सो हिउतउ।
पइसइ चंदकांति चैतालइ सव्व सुहालइ॥ —(भ० क० ७, ८)

काव्य रूढ़ियाँ—धनपाल ने अपने काव्य में इन सात काव्य रूढ़ियों को प्रयुक्त किया है—(१) मंगलाचरण (२) विनय-प्रदर्शन (३) काव्य-रचना का प्रयोजन, (४) सज्जन-दुर्जन वर्णन (५) वन्दना (६) श्रोता-वक्ता शैली (७) आत्मपरिचय।

समाज और संस्कृति—धनपाल के काव्य में राजपूतकालीन समाज और संस्कृति की झलक दृष्टिगोचर होती है। भविष्यदत्त केवल सकल कलाएँ, ज्ञान-विज्ञान, ज्योतिष, तन्त्र-मन्त्रादिक ही नहीं सीखता है, वरन् विविध आयुधों का विविध प्रकार से संचालन, संग्राम में विभिन्न चातुरियों से बचाव, मल्लयुद्ध तथा हाथी घोड़े की सवारी आदि की भी शिक्षा प्राप्त करता है, जो उस युग की विशेष कलाएँ थीं। उस युग में स्त्रियाँ विभिन्न कलाओं में तथा विशेषकर संगीत और वीणावादन में निपुण होती थीं। सरूपा इन कलाओं से युक्त थी—वीणालावणिगेयपरिक्खणु कुडिलावियारि सरोसणि रिकवणु। (भ० क० ३, ३)

लोक-जीवन और लोक-रूढ़ियाँ—धनपाल ने तत्कालीन लोक-जीवन और लोकरूढ़ियों का विवरण प्रस्तुत

१. श्री दलाल गुणे : भविसयतकहा की भूमिका, पृ० २८-२९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किया है, जिसमें प्रियवियोग में भारतीय ललनाएँ कौओं को उड़ाती थीं और उनके माध्यम से पति तक सन्देश पहुँचाती थीं। पुत्र के परदेश-गमन पर माताएँ बेटे के सिर पर दही, दूर्वा और अक्षत लगाकर पूजा-वन्दना करती थीं। जल-देवता का पूजन भी लोक-रूढ़ि थी। उस समय बहु-विवाह की प्रथा थी। विवाह कार्यों में अत्यधिक धन-व्यय किया जाता था। इस अवसर पर दमामा, शंख, तुरही और मादल बजाते थे। किन्तु युद्ध के समय नगाड़ा बजाते थे। शृंगार प्रसाधन में महिलाएँ अत्यधिक रुचि रखती थीं। करधनी, हार, कुण्डल और केशकलाप में कुसुमों का प्रसाधन सामान्य वनिताएँ भी करती थीं। इसी प्रकार अँगूठी, भुजबन्द, कंगन, बिछुए, कटिसूत्र, मणिसूत्र आदि का भी सामान्य जनता में प्रचलन था। उस काल में युद्ध किसी सुन्दरी या राज्य-विस्तार के निमित्त होते थे। उस समय कई छोटे-छोटे राज्य थे।

धार्मिक विश्वास—अपभ्रंश के सभी काव्य जैन-कवियों द्वारा रचित हैं। इसलिए यह स्वाभाविक ही है कि इनमें २४ तीर्थंकरों का स्तवन तथा उनके द्वारा निर्दिष्ट धर्म का स्वरूप एवं मोक्ष-प्राप्ति का उपाय वर्णित हैं। किन्तु मध्यकालीन देवी-देवताविषयक मान्यताओं का उल्लेख भी इन काव्यों में मिलता है। यही नहीं, जल (वरुण) देवता का पूजन, जल-देवता का प्रत्यक्ष होना, संकट पड़ने पर देवी-देवताओं द्वारा संकट-निवारण आदि धार्मिक विश्वास कथाओं में लिपटे हुए प्रतीत होते हैं।

इस प्रकार भविसयतकहा कथा-काव्य से कवि धनपाल का व्यक्तित्व और कृतित्व देखा जा सकता है, जो अपभ्रंश काव्य में अपना प्रमुख स्थान रखते हैं।

□□□□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org